बिज़नेस स्टैंडर्ड
वर्ष 12 अंक 99

महत्त्वाकांक्षी कदम

नरेंद्र मोदी के नेतृत्व वाली नई सरकार में गजेंद्र सिंह शेखावत को नवगठित जलशक्ति मंत्रालय सौंपा गया है। उनका काम अत्यंत कठिन होने वाला है। सरकार की महत्त्वाकांक्षी योजना नल से जल के तहत 2024 तक हर परिवार को जलापूर्ति उपलब्ध कराने के अलावा शेखावत को अंतरराष्ट्रीय और अंतरराज्यीय जल विवादों और नमामि गंगे परियोजना पर भी काम करना होगा। नमामि गंगे योजना गंगा तथा उसकी सहायक नदियों की सफाई की प्रमुख योजना है। ये सारी योजनाएं भारतीय जनता पार्टी के चुनावी घोषणापत्र के अनुरूप ही हैं। घोषणापत्र में देश के जल संबंधी मसलों से एकीकृत तरीके से निपटने की बात कही गई है।

मंत्रालय के गठन का विचार सराहनीय है क्योंकि इसमें बड़े बदलाव लाने की क्षमता है। नीति आयोग की 2018 की एक रिपोर्ट के मुताबिक देश में करीब 60 करोड़ लोग भारी जल संकट से जूझ रहे हैं। करीब तीन चौथाई परिवारों के घर पीने का साफ पानी नहीं आता, 84 फीसदी ग्रामीण परिवारों को नल से पानी नहीं मिलता और 2,00,000 लोग हर वर्ष इसलिए मर जाते हैं क्योंकि उनकी पहुंच सुरक्षित पानी तक नहीं है। 70 फीसदी पानी प्रदूषित है और जल गुणवत्ता के मामले में 122 देशों की सूची में भारत को 120वां स्थान प्राप्त है।

नई दिल्ली, बेंगलूरु, चेन्नई और हैदराबाद समेत 21 शहरों में सन 2020 तक भूजल समाप्त हो जाएगा। इसका असर करीब 10 करोड़ लोगों पर पड़ेगा। सन 2020 तक भारत औपचारिक तौर पर पानी की कमी वाला देश घोषित हो जाएगा जहां प्रति व्यक्ति पानी की उपलब्धता 1,000 घन मीटर से कम है। सन 2030 तक पानी की मांग उपलब्ध आपूर्ति का दोगुना हो जाएगी और देश के सकल घरेलू उत्पाद में छह फीसदी तक की गिरावट आ सकती है।

इस संकट की एक प्रमुख वजह यह है कि देश का नदी तंत्र भारी जल संकट से जूझ रहा है। गंगा की प्रमुख सहायक नदी यमुना का उदाहरण लें तो एक वक्त इसे दिल्ली की जीवनरेखा कहा जाता था। परंतु आज यह देश की सबसे दूषित नदियों में से एक है। केंद्रीय प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड के मुताबिक यमुना के पानी की गुणवत्ता केवल औद्योगिक इस्तेमाल के लायक बची है और उसके पानी में जलीय जीवन की संभावना बिल्कुल नहीं है।

कृषि एक अन्य मसला है। दुनिया की कुल आबादी का 18 फीसदी भारत में है जबकि शुद्ध जल का केवल 4 फीसदी हमारे यहां है। इसमें से 80 फीसदी का इस्तेमाल खेती में होता है। देश के किसान चावल, कपास, गेहूं और गन्ने जैसी पानी की खपत वाली फसल पसंद करते हैं। चावल निर्यात की जाने वाली प्रमुख फसल है। एक किलो चावल उगाने में करीब 3,500 लीटर पानी लगता है। परंतु किसानों को दूसरी फसल उगाने के लिए मनाना आसान नहीं है।

देश में अधिकांश बारिश जुलाई से सितंबर के दरमियान होती है। भंडारण और समुचित बुनियादी ढांचे या जल प्रबंधन के अभाव में कुल बारिश का बमुश्किल 20 फीसदी इस्तेमाल हो पाता है। केंद्र में जल मंत्रालय को भी पानी के अलावा अन्य चुनौतियों का सामना करना होगा। नल से पानी के वितरण के लिए बुनियादी सुविधाएं बहुत अहम हैं। ग्रामीण इलाकों में इसकी हालत खस्ता है। इसका आधुनिकीकरण करने की आवश्यकता है। पानी राज्य की विषयवस्तु है और अधिकांश राज्यों में झील और तालाब शहरीकरण और औद्योगीकरण की भेंट चढ़ गए हैं। पानी माफिया, अचल संपत्ति लॉबी और यहां तक कि किसान भी केंद्र का हस्तक्षेप पसंद नहीं करते। केंद्र केवल अंतरराज्यीय नदियों के माध्यम से हस्तक्षेप कर सकता है वह भी तब जब संसद जनहित में कानून बना दे।

बिनय सिन्हा

राजकोषीय नहीं मौद्रिक प्रोत्साहन की जरूरत

मुद्रास्फीति के शेष बचे कुछ निशान के साथ हमारी लड़ाई के चलते उन महत्त्वपूर्ण नीतिगत लाभ को गंवाने का खतरा उत्पन्न हो गया है जो हमने हाल के वर्षों में हासिल किए हैं। जानकारी दे रहे हैं नीलकंठ मिश्रा

लाखों-करोड़ों मनुष्यों के बीच सहमति कायम करना आसान नहीं है। जब ऐसा होता है (हमने हालिया आम चुनाव में ऐसा देखा) तो बड़े आर्थिक सुधारों की आकांक्षा होना भी स्वाभाविक है। अब जबकि इन उम्मीदों के आधार पर अनुमान प्रकट किए जाने लगे हैं तो सरकार के ऊपर भी मौजूदा आर्थिक मंदी से निपटने के लिए 'कुछ कर दिखाने' की भावना हावी हो रही है।

लोगों को अपनी आकांक्षाओं के प्रति सजग रहना चाहिए। ऐसे स्पष्ट उपाय हैं जो सरकार उठा सकती है लेकिन फिलवक्त महत्त्वपूर्ण राजकोषीय प्रोत्साहन को सही नहीं माना जा सकता। मौजूदा समस्या का हल मौद्रिक है।

बीते कई दशकों के दौरान देश की कमजोर विनिर्माण प्रतिस्पर्धा का विश्लेषण करने वाली रिपोर्टों में नियामकीय गतिरोध, कमजोर बुनियादी ढांचे और श्रमिकों की अकुशलता की शिकायत के अलावा उच्च ब्याज दरों की भी आलोचना की गई। अगर देश के विनिर्माता 12 फीसदी की दर पर उधार लेते हैं और चीन के विनिर्माता 6 फीसदी की दर पर उधार लेते हैं तथा भारत में फैक्टरियां स्थापित करने में अधिक वक्त लगता है (इससे ब्याज बढ़ता जाता है) तो देश की फैक्टरियां प्रतिस्पर्धी कैसे हो सकती हैं? ऐसे में दलील यही कहती है कि उच्च मुद्रास्फीति (सन 1960 के दशक से ही खुदरा महंगाई औसत 7.5 फीसदी रही है) और उच्च राजकोषीय घाटे के कारण भारतीय रिजर्व बैंक को उनका मुद्रीकरण करना पड़ा और ब्याज दरें नीचे नहीं आ सकीं।

ऐसे में दरों में गिरावट के लिए यह आवश्यक है कि मुद्रास्फीति और राजकोषीय घाटे में कमी आए। ये दोनों आपस में भी संबंधित हैं। उच्च राजकोषीय घाटे का संबंध अक्सर उच्च मुद्रास्फीति से भी होता है। ऐसे में पहले राजकोषीय स्थिति में सुधार की आवश्यकता थी लेकिन इसके साथ ही खाद्य उत्पादन अधिशेष की भी आवश्यकता थी।

बीते तीन वर्ष में मुद्रास्फीति की दर औसतन 3.5 फीसदी रही है। बीते चार वर्ष का औसत भी 4 फीसदी से कम रहा है। राजकोषीय घाटे का अनुपात देश के इतिहास का तीसरा सबसे कम है, हालांकि अन्य देशों की तुलना में यह अभी भी अधिक है। एक बार वेतन आयोग चक्र के लिए समायोजन के पश्चात तो शायद यह देश के इतिहास में भी न्यूनतम है। उच्च ब्याज दर की हिमायत के कारण ही राज्यों और केंद्र सरकारों का बजट से इतर व्यय होता है। निस्संदेह यह मामला अपारदर्शिता का है। परंतु यह व्यय असामान्य रूप से अधिक नहीं है। यह उत्पादक व्यय है और हमारी नजर में यह अर्थव्यवस्था में कर्जदारों के लिए उच्च ब्याज दर को उचित ठहराता है।

इन उल्लेखनीय उपलब्धियों के बावजूद और असमायोजित वृद्धि के धीमा पड़ने के बावजूद मौजूदा ब्याज दर माहौल कर्जदारों के लिए काफी सख्त बना हुआ है। धीमी मुद्रास्फीति के माहौल में कंपनियों की राजस्व वृद्धि में भले ही धीमापन आया हो लेकिन उनकी ब्याज लागत में कमी नहीं आई। इसका असर मुनाफे और निवेश करने योग्य पूंजी पर भी पड़ रहा है। मुद्रास्फीति के अलावा ब्याज दर के अन्य घटक: वास्तविक रीपो दर, 10 वर्ष के सरकारी बॉन्ड के प्रतिफल और रीपो दर के बीच का अंतर यानी टर्म प्रीमियम और ऋण का विस्तार आदि बढ़े स्तर पर हैं।

कम खाद्य महंगाई का भी हमें नकारात्मक असर देखने को मिला है। कृषि क्षेत्र की आय कमजोर हुई है क्योंकि अमीरों से गरीबों की ओर स्थानांतरण नहीं हो रहा है। इस बीच उधारी की दर में कमी नहीं आने से कोई लाभ नहीं हो रहा। इस तरह वेतन आयोग के माध्यम से खपत प्रोत्साहन भी सातवें वेतन आयोग में काफी कमजोर रहा। छठे वेतन आयोग में जहां कई वर्ष तक व्यवस्था में भारी प्रोत्साहन चलता रहा था, वहीं सातवें वेतन आयोग से वृद्धि को मिला इजाफा अब समाप्त होने लगा है। इसके बावजूद कोई समांतर लाभ नहीं हैं और टर्म प्रीमियम में कोई बदलाव नहीं है।

गत सितंबर में गैर बैंकिंग वित्तीय कंपनियों के नाटकीय पतन से भी पहले वृद्धि कमजोर पड़ने लगी थी। यह आठ फीसदी से नीचे रही लेकिन अभी समस्या अधिक है। इसमें दो राय नहीं कि मुद्रास्फीति के दोबारा जोखिम पकड़ने का संकट है। दूध की कीमतों में हालिया बढ़ोतरी और कुछ हद तक मुद्रास्फीति की महंगाई पर ध्यान देने की आवश्यकता है। हालांकि इस बीच राजनीतिक अर्थव्यवस्था के निहितार्थ और उनके जोखिम को भी ध्यान में रखना होगा। अगर लंबे समय तक वृद्धि धीमी रही और ब्याज दरों में अहम कटौती नहीं हुई तो राजनीतिक दबाव सरकार को उच्च राजकोषीय घाटे की स्थिति में धकेल सकता है। इससे बीते कई वर्ष के दौरान मिले नीतिगत लाभ गंवा दिए जाएंगे। स्वतंत्र भारत के इतिहास में अधिकांश वक्त मुद्रास्फीति ऊंची और अस्थिर रही है। ऐसा शायद इसलिए हुआ क्योंकि यह राजनीतिक आवश्यकता थी। सन 1960 के बाद से कृषि क्षेत्र की वास्तविक उत्पादन वृद्धि दर औसतन 2.5 फीसदी वार्षिक रही। इसके बावजूद कृषि श्रमिकों की तादाद सालाना केवल 1.6 फीसदी की दर से बढ़ी। उच्च खाद्य कीमतों ने आय को अमीरों से गरीबों तक पहुंचाया वरना काफी सामाजिक तनाव उत्पन्न हो सकता था।

ब्याज दर सुधार की प्रक्रिया आरंभ हो चुकी है। सरकारी बॉन्ड प्रतिफल में बीते कुछ सप्ताह में तकरीबन 40 आधार अंक की गिरावट आ चुकी है। गत 6 जून को रीपो दर में कटौती की जा चुकी है। बॉन्ड निवेशकों में इस बात को लेकर भी राहत है कि चुनाव से केंद्र में सत्ता परिवर्तन नहीं हुआ। राजनीतिक बदलाव से सरकारी व्यय में भी इजाफा होता।

अभी लंबी दूरी तय करनी है। जैसा कि हमने पहले भी कहा है अगर रीपो दर, टर्म प्रीमियम और ऋण का दायरा सभी घटकर सामान्य स्तर पर हो जाते हैं तो उधारी दर 2 फीसदी तक अधिक हो सकती है। भले ही भारतीय अर्थव्यवस्था कुछ अन्य अर्थव्यवस्थाओं की तरह दरों के लिहाज से संवेदनशील नहीं हो लेकिन दरों में गिरावट प्रोत्साहन दे सकती है। दलील के लिए अगर मॉर्गेज दर में दो फीसदी अंकों की गिरावट आ जाती तो यह अचल संपत्ति क्षेत्र के लिए बेहतर होता।

दरों में इस हद तक गिरावट आने के लिए यह आवश्यक है कि वास्तविक रीपो दर पूरी तरह सामान्य हो बल्कि वित्तीय तंत्र की क्षमता में सुधार का संकेत भी जाए। इन कदमों को नीतिगत एजेंडे पर रखना होगा। इस बीच सरकार द्वारा खपत आधारित व्यय बढ़ाने का दबाव भी नहीं होना चाहिए।

आईबीसी में सुधार और प्रतिस्पर्धा कानून की समीक्षा जरूरी

बाअदब

सोमशेखर सुंदरेशन

वित्तीय क्षेत्र में बढ़ते फंसे ऋण वित्त मंत्रालय की सिरदर्दी है। वहीं आईबीसी का प्रशासन कंपनी मामलों के मंत्रालय के जिम्मे है।

नई मंत्री ने वित्त मंत्रालय का प्रभार संभाल लिया है और वह केंद्रीय बजट बनाने में व्यस्त हैं। उनके पास वित्त और कंपनी मामलों के मंत्रालयों का प्रभार है, इसलिए उन्हें बजट के बाद इन मंत्रालयों से जुड़े बहुत से अहम काम करने होंगे। इन मंत्रालयों में बदलावों का प्रबंधन करना उतना ही बड़ा काम है, जितना कांग्रेस पार्टी के लिए उसके अध्यक्ष के हार स्वीकार करते हुए इस्तीफा देने के बाद के बदलावों को संभालना।

निस्संदेह केंद्रीय बजट भाषण में भी इन कार्यों में से कुछ का जिक्र किया जा सकता है। आम तौर पर बजट भाषण सत्तारूढ़ सरकार का न केवल कर नीति बल्कि आर्थिक नीति का दस्तावेज होता है। केंद्रीय बजट में बड़े सुधारों को कम शब्दों में लिखा जाता रहा है।

कई बार इन भाषणों की घोषणाओं में कुछ ठोस नहीं होता है। उदाहरण के लिए कॉरपोरेट बॉन्ड बाजार बनाने पर ध्यान देना। लेकिन कई बार ये घोषणाएं बड़े सुधारों का रास्ता साफ करती हैं, भले ही उनका बजट में थोड़े शब्दों में जिक्र किया जाए। ऋण शोधन अक्षमता एवं दिवालिया संहिता (आईबीसी), 2016 पिछली सरकार की सबसे बड़ी उपलब्धि है। इसका केंद्रीय बजट भाषण के एक छोटे से पैराग्राफ में जिक्र किया गया था। इस पैराग्राफ में कहा गया था कि लघु उद्योगों की मदद के लिए एक ऋण शोधन प्रणाली की जरूरत है।

अगर बजट भाषण को अलग रख दें तो दो ऐसे क्षेत्र हैं, जिन पर गंभीरता से ध्यान दिए जाने की जरूरत है।

पहला, बड़ी बदलावकारी बताई जा रही आईबीसी में गंभीरता से सुधार किए जाने की जरूरत है। उच्चतम न्यायालय ने इसकी अपरिपक्वता और असमानता को स्वीकार करने योग्य माना है और इसकी संवैधानिक वैधता को बरकरार रखा है। हालांकि इन तथ्यों में छिपी बात यह है कि दोनों मंत्रालयों के बीच फंसे इस कानून और इसके प्रशासन में सुधार की सख्त जरूरत है। वित्तीय क्षेत्र में बढ़ते फंसे ऋण वित्त मंत्रालय की सिरदर्दी है। वहीं आईबीसी का प्रशासन कंपनी मामलों के मंत्रालय के जिम्मे है।

इस कानून में संशोधन से भारतीय रिजर्व बैंक (आरबीआई) को यह ताकत मिल जाएगी कि वह बैंकों को यह निर्देश दे सकेगा कि आईबीसी का कैसे इस्तेमाल किया जाए और आईबीसी के तहत सभी कर्जदारों के साथ एकसमान व्यवहार करने में दिक्कत है। एक नियामक ने रेफरी की भूमिका छोड़ खुद खेल में हिस्सा लेना शुरू कर दिया। विनियमित बैंकों को कर्जदारों के खिलाफ कार्रवाई के जो विकल्प चुनने थे, अब उनका निर्देश नियामक की तरफ से दिया जा सकता है। यह अपने आप में एक गलत नीति का चयन है।

इस शक्ति का इस्तेमाल कर आरबीआई ने कर्जदारों की संपत्ति पर बैंकों के दावे के प्रवर्तन में एकसमान नीति अपनाई। इसने उन उद्योगों को प्रभावित करने वाले कारणों में विभेद नहीं किया, जिनसे विभिन्न ऋणी जुड़े थे। प्रत्येक उद्योग की परिस्थितियों पर गौर किए बिना एकसमान नीति अपनाने के आरबीआई के कदम को मनमाना और संवैधानिक रूप से अमान्य करार दिया गया। अगर बैंक खुद व्यावसायिक आधार पर ऐसा कदम उठाते तो यह पूरी तरह वैध होता। इसे सरकार के फैसले-तर्कसंगत या गैर-मनमानेपन के मापदंड पर नहीं कसा जाता। माना जाता है कि बैंक सभी कर्जदारों के खिलाफ आंख मूंदकर एक जैसी कार्रवाई करने के पक्ष में नहीं थे। मगर उनका फैसला आरबीआई ने लिया, लेकिन अदालत की दहलीज नहीं पार कर पाया। यह अपरिपक्व असमानता का अच्छा उदाहरण है। लेकिन यह उस स्थिति में नहीं होता, जब बैंक की तरफ से ऋणी के खिलाफ कदम उठाया गया होता। प्रवर्तन फैसलों को नीतिगत विकल्प पर प्रमुखता देना विवेकसम्मत नहीं था और इसे दुरुस्त किया जाना चाहिए।

दूसरा, प्रतिस्पर्धा कानून की बहुत से कार्यसमूह और सुधार समितियां समीक्षा कर रही हैं। इस दिशा में गंभीर प्रयास किए जा रहे हैं और इसे सफल बनाया जाना चाहिए। प्रतिस्पर्धा कानून शुरू करना भी अपने आप में बिना अधिक शोरगुल के किया गया सुधार था। इसे ऐसे समय लागू किया गया, जब उद्यमों के कारोबार करने के तरीके को नियंत्रित करने का विरोध हो रहा था। इसमें बदलावों के लिए बहुत सी सिफारिशें आएंगी। लेकिन किन्हें चुनें और किन्हें छोड़ें, यह अपने आप में एक अजीब समस्या पैदा कर देगा। यहां कुछ अहम नीतिगत विकल्प चुनने होंगे।

प्रतिस्पर्धी कानून में सहायक नियमों में निहित बहुत सी प्रक्रियाओं की गंभीरता से समीक्षा और सुधार की जरूरत होगी। यह याद रखा जाना चाहिए कि अगर एक कारोबार कड़े प्रतिस्पर्धी कानूनों से प्रभावित होता है तो बहुत से कारोबार ऐसे भी हैं, जो कड़े प्रतिस्पर्धी कानून न होने से प्रभावित होते हैं। प्रत्येक कारोबारी प्रतिस्पर्धी को कानून का संरक्षण मिलता है और जब कोई गैर-प्रतिस्पर्धी व्यवहार में लिप्त होता है तो इससे न केवल बाजार में ग्राहक बल्कि प्रतिस्पर्धी भी प्रभावित होते हैं।

नियामकों के बीच कड़ी जंग से भी प्रतिस्पर्धी कानून कमजोर हो रहा है। जो किसी एक क्षेत्र में विनियमित होते हैं, वे उस क्षेत्र के नियामक के साथ स्वाभाविक रूप से सहज हो जाते हैं। जब प्रतिस्पर्धा नियामक सवाल पूछता है तो क्षेत्रीय नियामक प्रतिस्पर्धा नियामक के खिलाफ काम करते हैं। नियामकों की भूमिका में कोई तालमेल न होने से अदालत में उम्मीद के विपरीत नतीजे आ सकते हैं। इसके नतीजतन किसी नियमित कारोबारी क्षेत्र में कोई व्यक्ति प्रतिस्पर्धी नियामक के खिलाफ कुछ राहत मिलने की उम्मीद कर सकता है।

(लेखक वकील और स्वतंत्र सलाहकार हैं।)

कानाफूसी

चुप्पी की नसीहत

ऑल इंडिया अन्ना द्रविड़ मुन्नेत्र कषगम (अन्नाद्रमुक) के कुछ विधायकों द्वारा सार्वजनिक रूप से दोहरे नेतृत्व ढांचे की आलोचना किए जाने के बाद तमिलनाडु के मुख्यमंत्री ई पलनिस्वामी और उपमुख्यमंत्री ओ पनीरसेल्वम ने पार्टी के नेताओं को चुप रहने की नसीहत दे डाली है। दोनों प्रमुख नेताओं की ओर से जारी किए गए एक साझा वक्तव्य में कहा गया कि अगर कोई भी अन्नाद्रमुक की भलाई के लिए अपना नजरिया रखना चाहते है तो उसे पार्टी मंच का इस्तेमाल करना चाहिए। उन्होंने कहा कि ऐसे नेता सामान्य परिषद और कार्यकारी परिषदों में अपनी बात रख सकते हैं। इसके अतिरिक्त वे मशविरा सत्रों का प्रयोग भी कर सकते हैं। गौरतलब है कि पार्टी में दोहरे नेतृत्व की व्यवस्था नई नहीं है। जब पूर्व मुख्यमंत्री जे जयललिता जीवित थीं तब वह राज्य प्रशासन संभालती थीं जबकि उनकी मित्र और करीबी सहयोगी वी के शशिकला पार्टी के निर्णय लिया करती थीं। इनमें मंत्रियों की नियुक्ति के निर्णय भी शामिल थे। जयललिता के निधन के बाद शशिकला ने पार्टी पर पूरा नियंत्रण कायम करने का प्रयास किया लेकिन पलनिस्वामी और पनीरसेल्वम ने हाथ मिलाकर उन्हें और टीटी दिनाकरन समेत उनके परिजनों को परिदृश्य से बाहर ही कर दिया।

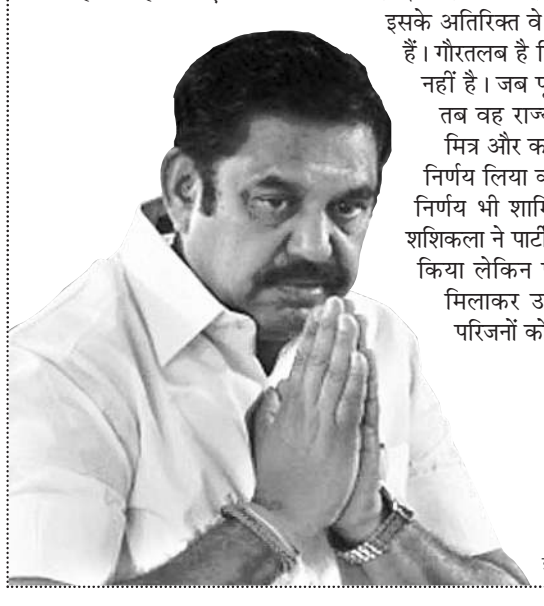

ई पलनिस्वामी

आपका पक्ष

लू की चपेट में राजधानी दिल्ली

राजधानी दिल्ली में तापमान सोमवार को 48 डिग्री सेल्सियस तक पहुंच गया। मौसम विभाग के अनुसार अगर किसी क्षेत्र में लगातार दो दिन तक तापमान 45 डिग्री से ऊपर पहुंच जाता है तो वहां लू की स्थिति घोषित कर दी जाती है। अगर तापमान 47 डिग्री से ऊपर पहुंच जाता है तो लू की गंभीर स्थिति बन जाती है। राजधानी दिल्ली में 9 जून, 2014 को 47.8 डिग्री तापमान दर्ज किया गया था। इस समय दिल्ली में पारा 48 डिग्री तक पहुंच गया है तो गंभीर स्थिति को दर्शाता है। हालांकि केरल में मॉनसून ने शनिवार को दस्तक दे दी है लेकिन उसके मध्य भारत तक पहुंचने में संभवत: 15 से 20 दिन का समय लग सकता है। दिल्ली के अलावा दिल्ली से सटे नोएडा तथा गुड़गांव में भी पारा काफी चढ़ गया है। दिन में तपती धूप और गर्म हवा की तपिश से लोग परेशान हैं। सरकार को सड़कों के किनारे लगे पेड़ों में दिन में तीन बार पानी का छिड़काव करना चाहिए जिससे राहगीरों को कुछ राहत मिल सके। कंक्रीट का जंगल बन चुके महानगरों में पेड़ों की कमी है। सरकार को शहर के खाली क्षेत्र की पहचान कर वहां पेड़-पौधे लगाने चाहिए। इसके अलावा लगाए गए पौधों की देखभाल के लिए माली की भी नियुक्ति करनी चाहिए जो समय-समय पर पौधों को सींच सके। सरकार के साथ लोगों को भी स्वयं पौधे लगाने चाहिए जिससे उनके द्वारा लगाए गए पौधों से किसी एक व्यक्ति को भी राहत मिल सके।

मोहित कुमार, नई दिल्ली

राजधानी दिल्ली में सोमवार को तापमान 48 डिग्री सेल्सियस तक पहुंच गया था *-पीटीआई*

इंटरनेट-मोबाइल का अधिकतम इस्तेमाल

रोटी, कपड़ा और मकान के अलावा अब इंटरनेट भी आम जरूरत की चीज बन गई है। तकनीक के विकास के साथ इंटरनेट उपयोग करने की संख्या तथा इस्तेमाल करने की अवधि तेजी से बढ़ रही है। एक मीडिया एजेंसी की रिपोर्ट के अनुसार मोबाइल इंटरनेट पर मीडिया उपभोग वर्ष 2013 में 9.4 मिनट प्रतिदिन था जो वर्ष 2019 में बढ़कर 54 मिनट हो गया है। एजेंसी के अनुमान के मुताबिक वर्ष 2021 तक मोबाइल इंटरनेट पर मीडिया का उपभोग 79 मिनट प्रतिदिन हो जाएगा। एजेंसी के मुताबिक टेलीविजन मीडिया का प्रमुख माध्यम रहेगा और वर्ष 2021 तक एक व्यक्ति प्रतिदिन टीवी पर 144 मिनट समय व्यतीत करेंगे जो वर्ष 2013 में 140 मिनट था। एजेंसी का यह भी अनुमान है कि एक व्यक्ति इस साल औसतन 320 मिनट प्रतिदिन मीडिया पर समय व्यतीत करेंगे। यह आंकड़ा वर्ष 2013 में 270 मिनट था जो वर्ष 2021 में बढ़कर 348 मिनट तक पहुंच जाएगा। देश में मोबाइल सेवा प्रदाता कंपनियों के बीच प्रतिस्पर्धा के कारण डेटा की दर में काफी गिरावट आई है। इसके अलावा स्मार्टफोन के सस्ते होने के कारण भी लोग डेटा का खूब इस्तेमाल कर रहे हैं। डेटा के इस्तेमाल में बढ़ोतरी का दूसरा कारण मोबाइल में फिल्म, वीडियो तथा वेब सीरीज का आना भी है। लोग सार्वजनिक परिवहन में छोटी यात्रा के दौरान मोबाइल पर वेब सीरीज या न्यूज देख रहे हैं। इसमें सबसे बड़ा योगदान तकनीक तथा डेटा के दाम का सस्ता होना है। इंटरनेट या मोबाइल अधिक इस्तेमाल करने के खतरे भी हैं जिससे संभलकर रहना चाहिए।

पाठक अपनी राय हमें इस पते पर भेज सकते हैं : संपादक, बिजनेस स्टैंडर्ड लिमिटेड, 4, बहादुर शाह जफर मार्ग, नई दिल्ली - 110002. आप हमें ईमेल भी कर सकते हैं : lettershindi@bsmail.in उस जगह का उल्लेख अवश्य करें, जहां से आप ईमेल कर रहे हैं।